मातृभूमि

डॉ वासुदेव शरण अग्रवाल

जिसके भाल पर कश्मीरजन्मा कुमकुम-केसर का तिलक है, जिसके हृदय पर जह्नु-तनया की एकावली है, जिसके चरणों में भक्ति-भाव से अवनत सिंघल प्रणाम करता है, जिसके चरणामृत का महोदधि नित्य पान करते हैं-उस माता के स्वरूप को जानने की किसे इच्छा न होगी? जिसके रक्षक स्वयं शैलराज हिमवंत हैं, जहाँ सरस्वती की शास्वत धारा प्रवाहित है, जहा सिंधु और ब्रह्मपुत्र शैलराज के अमृत-संदेश को अगाध सागर के समीप मंत्रणा के लिए जाते हैं, जहाँ मरुस्थल और दंडकारण्य जैसे विशिष्ट प्रदेश हैं-वह भूमि किस नाम से विश्रुत है?

जिसमें वेत्रवती, सुवर्णरेखा और ताम्रपर्णी जैसे सुंदर नाम वाली नदियाँ हैं, जिसमें कांची, द्वारावती विशाला और मथुरा जैसी राजधानियाँ हैं, जहाँ आदिकवि ने मर्यादा-पुरुषोत्तम के पुण्यश्लोक चरित का गान किया है, जहाँ आर्ष ज्ञान का प्रथम स्फुरण हुआ, जिसमें दौ:ष्यन्ति भारत ने समुद्र-पर्यंत पृथ्वी का एकछत्र शासन किया-वही हम सब की जन्मभूमि भारत में ही है।

इसके उत्तर में गिरिराज हिमालय पूर्व से पश्चिम तक के प्रदेश को व्याप्त करके पृथ्वी के मानदंड की तरह स्थित है। यहाँ गौरीशंकर और धवलागिरी सदृश तुंग गिरिशिखर हैं, जहां नित्य प्रभात के समय सूर्य-रश्मियाँ सुवर्ण-जल से हिमालय को स्नान कराती हैं। जब तक पृथ्वी पर गंगा-यमुना की वारिधाराएँ हैं, तब तक उन्नत गौरीशंकर की महिमा प्रख्यात रहेगी। यहीं के एक आश्रम में यौवनन्मेष के समय आभूषणों के स्थान पर वल्कल पहनकर पर्वतकुमारी ने अखंड तप:समाधि के द्वारा शिव को प्राप्त किया था, जिसके कारण इस गिरिश्रृंग की संज्ञा आज तक गौरीशंकर प्रसिद्ध है। इसी पर्वतराज को अर्वाचीन युग में बंगाल की एक सुपुत्र सिकदर महोदय ने वैज्ञानिक जगत् के समक्ष विज्ञापित किया था।

हिमालय की एक प्रदेश में ही मानसरोवर और राक्षस ताल हैं। मानस की आध्यात्म-महिमा को मातृभाषा के अनेक कवियों ने गाया हैं। यहीं कैलाश के उत्संग में अलकापुरी बसती है, जहाँ के कान्ता-विश्लेषित यक्ष ने श्रावण मास में मेघ को दूत बनाकर भेजा था। यहाँ सरल और देवदारु के वृक्ष हैं, यह आज तक किन्नरों की निवास-भूमि है। अक्षोट के विटप इसी प्रदेश में होते हैं, जिनके गर्भ में हिम से त्रस्त उष्णता छिपकर शरण लेती है। इन वनों में कृष्ण मृग स्वच्छंद बिचरते हैं। इन कन्दराओं में वनकेशरी निवास करते हैं। यहाँ के तपोवनों में कपिला धेनु ऋषियों के साथ रहती हैं-ये देवभूमियाँ अनन्त समय तक भारत के पुत्रों को संयम का पाठ पढ़ाती रहेंगी।

यहाँ नाना प्रकार की वीर्यवती औषधियाँ होती हैं। शिलाजतु का जन्म यहीं होता है। अनन्त रत्नों के प्रभाव-स्थान इस प्रदेश में ज्योतिष्मती औषधियों के रूप में बिना तैल के प्रदीप जलते हैं। वेदों और उपनिषदों की लिखने योग्य भूर्जत्वच् यहीं होता है। यहाँ की चमरी गायें हिम के सदृश सान्द्र दुग्ध देती हैं। यहाँ हिमवन्त आर्ष सभ्यता का अमर गोप्ता है। यहीं त्रिविष्टप भूमि है। यहीं उत्तर कुरु प्रदेश हैं, जिनके उत्तर में रम्यक और हिरण्यक वर्षों का विस्तार है।

वह देखो, भारत का भाल कश्मीर प्रदेश सुशोभित है, जिसके लिए कभी विल्हण ने लिखा है-

"सहोदराः कुङ्कुमकेसराणां भवन्ति नूनं कवितावलासाः।
न शारदादेशमपास्य दृष्टतेषां यदन्ययत्र मया प्ररोहः।।"

अर्थात शारदा देश काव्य और केसर का सनातन प्रभव-स्थान है। इस देश के उत्तर में निषध पर्वत है, जिसके दूसरी ओर वक्षु और कपिशा नदियाँ हैं। किसी समय आर्य-साम्राज्य का विस्तार वहाँ तक था। कश्मीर खण्ड की राजधानी श्रीनगर की स्थापना प्रियदर्शी महाराज अशोक ने की थी। भाष्यकार पतंजलि की जन्म भूमि गोनर्द यहीं है। कथासरित्सागर के रचयिता सोमदेव यहीं हुए हैं। व्याकरण, साहित्य और शैव-सिद्धांत रूप शास्त्र त्रिमूर्ति के युगपद् विलास साक्षी यही कश्मीर-भूमि है। नील-मत-पुराण के रचयिता नील मुनि और राजतरंगिणी के लेखक कल्हण यहीं हुए हैं। मनु-भाष्य के रचयिता मेधातिथि ने यहीं जन्म लिया था। छविल्लभट्ट, हेलाराज, जोनराज, राजानक रुय्यक, विल्हण, क्षेमेंद्र, मंख आदि कवियों के हृदय में मानों कश्मीर की प्रतिभा एक साथ ही स्फुरित हो उठी। काव्यप्रकाशकार मम्मट और वैयाकरण-शिरोमणि कैयट ने कश्मीर की ही पुण्य-भूमि को अलंकृत किया। यहीं जम्मू के समीप एक पर्णशाला में बैठकर कापिष्ठिल वशिष्ठ-गोत्री श्री दुर्गाचार्य ने यास्कीय निरुक्त पर प्रसिद्ध ऋज्वर्था नामक वृत्ति की रचना की। इस कश्मीर के नर-रत्न अभी तक भारत के मस्तक को ऊँचा बना रहे हैं। यहाँ के जलवायु का माहात्म्य विश्व-विश्रुत है।

कश्मीर के बीच में सिंधु नद बहता है। सिंधु के उस पार केकय और गान्धार देश हैं। पुरायुग से लेकर आज तक ये प्रदेश श्वेती, कुभा, क्रुमु और गोमती आदि नदियों के द्वारा अपनी जलराशि सिंधु को अर्पित करते हैं। इसी परोपनिषद भूखंड को मौर्य सम्राट चंद्रगुप्त ने यवन-राजलक्ष्मी के साथ सिल्यूकस से छीन लिया था। यहीं सिन्धु के समीप तक्षशिला नगरी है, जहाँ के विश्वविद्यालय में महाराज बिंबिसार के राजवैद्यजीवक ने, जो कौमारभृत्य-शास्त्र के निष्णात पण्डित थे, सात वर्ष तक शिक्षा पायी थी। यहीं चरक ने आयुर्वेद के अष्टांगों का निरूपण किया तथा महामुनि सुश्रुत ने शल्य-शास्त्र के सूक्ष्म प्रयोग किये। सिन्धु तट के शालातुर ग्राम में जन्म लेकर दाक्षीपुत्र भगवान् पाणिनि ने तक्षशिला के विश्वविद्यालय में ही शिक्षा पाकर अष्टाध्यायी व्याकरण की रचना की। जब तक संसार में विज्ञान का अस्तित्व है, तब तक आर्य जाति के इस विराट् मस्तिष्क के प्रति मनीषियों को श्रद्धांजलि अर्पित होती रहेगी। मातृभूमि के स्वरूप का दर्शन करने वालों! इस तक्षशिला नगरी को प्रणाम करो। यहाँ के इंगुदी वृक्ष धन्य हैं, जिनके तेल से पाणिनि ने अध्ययन किया।

जिसके क्रोड़ में हिमालय की पाँच पुत्रियाँ कल्लोल करती हैं, वह पंजाब देश है। वितस्ता, चन्द्रभागा (असिक्नी), इरावती(परुष्णी), शुतुद्रु और विपाशा-पाँचों पाँच उँगलियों की तरह फैली हुई हैं। यहीं असिक्नी नदी के तीर पर सम्राट सुदास का दस राजाओं के साथ घोर संग्राम हुआ था। वितस्ता के तीर पर वीर-के सरी महाराज पुरु ने यवन सम्राट् सिकन्दर का रण-प्रांगण में आह्वान किया था। शुतुद्रु के तीर पर चींटियों की तरह फैली हुई हूण सेना को दुर्दांत महाराज स्कन्दगुप्त ने परास्त करके भारतीय सभ्यता की रक्षा की। यहीं धर्मक्षेत्र कुरुक्षेत्र है, जहाँ अनेक बार विधाता ने भारत के भाग्य-अंको को मेट कर लिखा है। इसी के समीप देहली है, जो मदोद्धत नृपतियों को विनाश-क्षेत्र में भेजने के लिए सचमुच ही भारत का देहली-द्वार रहा है। पंजाब प्रदेश में ही कठों का गणराज्य था, जहाँ कठोपनिषद् की रचना हुई। यहीं के एक तप:पूत ब्रह्मचारी ने मृत्यु और अमृत के प्रश्नों पर गहन विचार किया था। यहीं मालव और क्षुद्रक गणों के राज्य थे- वे मालव जिनके विषाक्त तीरों ने यवनराज सिकन्दर को मरणासन्न बना दिया था और वे क्षुद्रक, जिन्होंने अपने अमोघ शस्त्रों के प्रताप से अकेले ही यूनानी सेना को परास्त करके सिकन्दर को सन्धि करने

पर बाध्य किया था। यहाँ कैसे-कैसे पराक्रमी योद्धा थे? तीन-तीन गज लम्बे तीरों से लड़ने वाली काल के समान भयंकर पदाति-सेना इसी भूमि में विचरती थी। यहीं शिबि और आरट्टों के गणराज्य थे, जिनके विशीर्ण खण्डहर अब भी प्राचीन वैभव का स्मरण दिलाते हैं। यहीं सरस्वती और दृषद्वती नदियों के बीच में ब्रह्मावर्त प्रदेश में नामवेद का मधुर गान होता था।

इसी पंजाब प्रदेश की सुपुत्रों ने अनन्त बार अपने रक्त की आहुति देकर भारत की मान-गौरव की रक्षा की है। क्यों माता! क्या प्रसिद्ध बलि-वेदि अमृतसर इसी प्रदेश में है? हाँ, देवी को असाधारण भेंट चढ़ाने वाले गुरु गोविंद सिंह के स्थान को छोड़कर और कोई स्थान उसके उपयुक्त हो सकता है? इन्हीं पाँच नदियों के बीच घूम-घूमकर गुरुनानक ने एक ईश्वर का गुणगान किया था। फिर दो शताब्दी बाद इसी प्रदेश में वीर बैरागी बन्दा ने शोणित-पण की प्यासी तलवार को दुर्विनीत यवनों के विरुद्ध धारण किया। जिस स्थान पर चिड़ियों से बाज मारे गये, उस भूखंड को माता गौरवपूर्ण अपने वक्ष पर धारण करती है।

इस प्रदेश के उत्तर-पश्चिम दिगन्तर में पुरुषपुर है, जहाँ अनेक बार भारत की पौरुष की परीक्षा हुई है। यहीं पर राजा आनन्दपाल ने असंख्य हिंदू-सेना लेकर यवनों को चालीस दिन तक मृत्युपाश में बाँध रखा था। इसी के निकट की पर्वत उपत्यकाओं में प्राचीन केकय देश के वंशधर पुरुष सिंह गक्खड़ निवास करते थे, जिन्होंने रावण सेनापति के लिए यमलोक का मार्ग प्रशस्त कर दिया था। पंजाब के नैर्ऋत्य कोण में मुलतान नगर है। प्राचीन मूल स्थान का मार्तंड-मन्दिर अपने समय में भारत की स्थापत्य कला का एक अद्‌भुत नमूना था। हिंदू-अभ्युदय के संध्याकाल में इसी पंजाब प्रान्त के महाराज रणजीत सिंह ने अपने शौर्य-पराक्रम से अफ़गानों के विरुद्ध भालों की नोक से निर्मित मानों एक लोहे का अभेद्य प्राचीर खड़ा कर दिया था। उनके प्रधान सेनापति हरिसिंह नलवा के विजय-गीत आज भी पंजाब के घर-घर में गाये जाते हैं। पंजाब के दक्षिण-पूर्व में इन्द्रप्रस्थ था। इस प्रदेश में महाराज हिस्तनं ने हस्तिनापुर बसाया था। इसी चक्र में 'जय' नामक इतिहास की घटनाएँ आज से लगभग पाँच सहस्त्र पूर्व घटित हुई थी। शान्तनु-पुत्र सनातन-ब्रह्मचारी गांगेय-भीष्म यहीं रहते थे। इसी के दक्षिण में द्वैत वन था, जहाँ राज्यश्री-विहीन पांडवों ने कुछ समय तक निवास किया था। स्थाणीश्वर के सम्राट यशोमती-पुत्र महाराजाधिराज हर्षवर्धन ने विक्रम की सातवीं शताब्दी में धर्म राज्य स्थापित किया। यहाँ की धूल के कण-कण में माता का सौरभ मिला हुआ है। यमुना नदी के तट पर खड़े होकर देखने से दाहिने हाथ की ओर विशाल राजस्थान है और बायीं ओर संयुक्त प्रान्त। ऐसा प्रतीत होता है मानो सूर्य की दुहिता क्षात्र धर्म और ब्राह्मण-धर्मों के बीच की सीमा बना रही है। जिस राजस्थान की महिमा का पार चन्द और सूरजमल की लेखनी भी पूरी तरह ना पा सकी ,वहाँ के क्षात्र-धर्म का संपूर्ण चित्र कौन खींच सकता है? जब सरस्वती नदी समुद्र तक बहती थीं, उस प्रत्न युग में यह मरुभूमि सलिलार्णव के नीचे छिपी हुई थी। विधाता के विशेष प्रसाद से वीर रस ने अपने निवास के लिए इस भूखंड को सागर-गर्भ से प्राप्त किया था। यहाँ के रण-बाँकुरे, नर-पुंगवों और आर्य-देवियों के उदात्त चरित्रों का गान करके कविगण अनन् काल तक अपनी लेखनी को पवित्र करते रहेंगे। यहाँ का प्रत्येक स्थान एक न-एक वीर की कीर्तिगाथा से सम्बद्ध है। यहाँ पद-पद पर आर्य-देवियों ने सहस्त्रों की संख्या में सनातन सतीत्व की रक्षा के लिए हँसते-खेलते आत्मबलि दी है। इसके अर्बुद पर्वत की दुर्गम घाटियों ने अनेक बार राजस्थान की आकुल मर्यादा को बचाया है। बापा रावल, समरसी,राणा कुंभा तथा राणा साँगा जैसे वीर इसी राजस्थान में जन्मे हैं। हिंदू जाति को स्वातन्त्र्य का पाठ पढ़ाने वाले अगर आचार्य महाराणा प्रताप सिंह ने यही सिसोदिया वंश की मान रक्षा के लिए प्रसिद्ध हल्दीघाटी के युद्ध में असंख्य यवन सेना का वध किया था। जिसे नील चेतक के अश्वारोही

का चरित्र राजस्थान के प्रत्येक घर में आज भी गाया जाता है, उस वीर-केसरी का यश जब तक भारत-वसुंधरा के युवकों में प्राण है, तब तक अक्षुण्ण बना रहेगा।

राजस्थान ने किसी समय औधेय और मालव गणों को शरण दी थी। पंजाब प्रदेश के समान ही यह भूमि भी अनेक गणराज्यों की जननी रही है। उनके अंक और लाक्षनों से चिन्हित मुद्राएँ आज भी पायी जाती हैं। यहाँ की मध्यमिका नगरी किसी समय शिबि जनपद की राजधानी थी। उसमें संकर्षण और वायु देव के देव धाम थे। इसी राजस्थान में विराटनगर था। जहां पाण्डु कुल के वंशतंतु को अविच्छिन्न रखने वाली देवी उत्तरा का जन्म हुआ था। यहीं दक्षिण में महाकवि माघ की जन्मभूमि श्रीमाल नगरी है। राजस्थान के क्षत्रियों के छत्तीस कुलों का पृथक-पृथक विस्तार वर्णन असंभव ही है। पद्मिनी और दुर्गावती की जन्मभूमि को आर्य-संतान अब भी श्रद्धा के साथ प्रणाम करती है। भक्ति स्रोतश्विनी मीराबाई का स्मरण करके भारतीय महिलाओं के मुखमंडल आज भी प्रसन्नता से जगमग हो उठते हैं। श्रद्धा की साक्षात् मूर्ति मीरा के अध्यात्म-अनुभव बड़े मूल्यवान हैं।

यमुना के बाँये तट पर ब्रह्मर्षि देश है। यहाँ ब्रह्म-विद्या का संतत प्रचार था। गंगा के तट पर पांचालों की कान्यकुब्ज नामक राजधानी थी। माया, अयोध्या, काशी, कौशांबी, श्रावस्ती आदि प्रसिद्ध पुरियाँ यहीं पर हैं। शूरसेन राज्य की राजधानी मथुरा योगिराज भगवान श्री कृष्ण की जन्मभूमि है। उत्तर कोशल की राजधानी अयोध्या नगरी में पुण्यश्लोक भगवान रामचंद्र ने जन्म लिया था। जिस सरयू के तीर पर इक्ष्वाकु-वंश के नृपतियों के अनेक यूप थे, आज भी वह अयोध्या के पास से बहती हुई उस अतीत महिमा का संदेश दे रही है। जिन अरुंधती-पति तपोनिधि वशिष्ठ के लिए कालिदास ने निम्नलिखित श्लोक लिखा है, उनका आश्रम अयोध्या के समीप ही था-

यह श्लोक समस्त गंगा की अन्तर्वेदी का रहस्य सूत्र है।

'पुरुषस्य पदेव जन्मनः समर्तीनं च भवच्च भावि च ।
सहि निष्प्रतिधेन चक्षुषा त्रितयं ज्ञानमयेन पश्यति ॥'

यहाँ से कुछ दूर पर वाल्मीकि मुनि का तपोवन था, जहाँ शब्दब्रह्म का साक्षात्कार करने वाले प्राज्ञ कवि की वाणी का आदि-काव्य रामायण के रूप में अवतार हुआ। वह अवध-भूमि धन्य है, जहाँ काव्य-मानस के हंस गोस्वामी तुलसीदास जी ने जन्म लेकर अनेक पुराण और श्रुतियों के रहस्यों को अपने 'रामचरितमानस' द्वारा हिंदू जाति के लिए गंगा जी के समान सुलभ कर दिया। देवों की यज्ञभूमि प्रयाग में गंगा-यमुना के संगम का दृश्य कितना मनोहर है, जिसकी छटा से मुग्ध होकर कालिदास की सरस्वती के प्रवाह में कुछ समय के लिए उपमाओं की बाढ़ आ गई थी। प्रयाग के समीप ही वत्सराज उदयन की कौशांबी नामक राजधानी थी। वासवदत्ता के स्वामी उदयन भारतीय उपाख्यानों के प्रतिष्ठित नायक हैं। महाकवि सुबन्धु, भास, हर्ष आदि ने अनेक बार उदयन का गुणगान किया।

लोकपावनी गंगा के बाँये तट पर काशी नगरी बसी हुई है। यहाँ के ज्ञान की महिमा अनन्त समय से संसार में व्याप्त रही है। संसार के इतिहास में सबसे प्राचीन पुरी यही है। काशी इतिहास से अतीत है। काशी की व्योम में सर्वप्रथम ज्ञान-सूर्य का प्रकाश हुआ। संयम और समाधि की मूर्ति जैन तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ ने यहीं जन्म लिया। इसी महापुरी में श्री शंकराचार्य का ज्ञानचक्षु स्वयं शिव की कृपा से उन्मिषित हुआ। वाचस्पति मिश्र और मधुसूदन सरस्वती जैसे प्रकाण्ड विद्वानों की धात्री यही पुरी है। यहीं कुल्लूक भट्ट ने मनु के अर्थ का प्रकाश किया। पांडित्यरूपी महाकान्तार के निर्भय सिंह पंडितराज जगन्नाथ ने यहीं पर अपनी गर्जना के समस्त उत्तरापथ को कम्पायमान कर दिया था। व्याकरणशास्त्र के उद्‌भट संस्कारक श्री भट्टोजि दीक्षित ने यहीं सिद्धांत कौमुदी की रचना की। उनसे पूर्व पाणिनि के

सूत्रक्रम का प्रतिपादन करने वाली कोशिका का यहीं निर्माण हुआ था। अप्पय दीक्षित जैसे अद्वितीय पंडित ने यहीं सिद्धांतलेश की रचना की। इस ज्ञानपुरी में विद्या का नित्य नवीन उत्सव रहा है। यहीं पर बापूदेव शास्त्री और शिव कुमार शास्त्री की कीर्ति दिग्-दिगन्त तक फैल गई थी। इसी काशीपुरी में पुन: एक बार श्रुतिमहती आर्य-सरस्वती की रक्षा और प्रचार के लिए एक ब्राह्मण द्वारा विश्व विश्रुत हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना हुई है।

काशी से थोड़ी दूर पर धर्म-चक्र-प्रवर्तन महाविहार है। जहाँ सर्वप्रथम भगवान बुद्ध ने सत्यचतुष्टय का सब लोगों के हित और सुख के लिए उपदेश दिया तथा आर्य अष्टांगिक मार्ग को प्रशस्त किया। तथागत के उस सनातन मानव-धर्म को जानने के लिए आज सब संसार उत्सुक हैं।

कोशल से थोड़ी दूर उत्तर में शाक्यों की राजधानी कपिलवस्तु थी। इसी के निकट लुंबिनी उद्यान में माया देवी के पुत्र सिद्धार्थ ने जन्म लिया था। आज भी रुम्मिनिदेई गाँव में अशोक का स्तम्भ उसी स्थान पर प्रतिष्ठित है। यहीं जेतवन था, जिसे अनाथपिण्डिक नामक नगर-श्रेष्ठी ने कार्षापणों से बिछाकर सौगात-संघ को प्रदान कर दिया था। इस प्रदेश के विक्रम उर्जित गणराज्य आज कीर्तिमात्रावशिष्ट हो गए हैं।

इसके पूर्व में बिहार प्रांत हैं, जहाँ पृथ्वी के नीचे प्रस्तर-कला के अनुपम रत्न छिपे हुए हैं। यहाँ ही मिथिला में अध्यात्मवेत्ता विदेह राजर्षि जनक का राज्य था। याज्ञवल्क्य के शिष्य राजर्षि जनक के सदृश ब्रह्मनिष्ठ और कर्मनिष्ठ और कौन हुआ है? संसार के राजाओं में जनक का नाम अकेला ही है। चंदनसुललित दक्षिण-बाहु तथा खड्ग-निकृन्तित वामबाहु में समान भाव रखने वाले विदेह जनक का अभी तक भारत के आध्यात्मिक ज्ञान श्रद्धा पूर्वक स्मरण करते हैं उन्हें की पुत्री सीता थी जिन्होंने सदा के लिए जुगत में पतिव्रत का आदर्श स्थापित किया ब्रह्मवादिनी सुलभा और ब्रह्म पारायण अवधूत अष्टावक्र ने यहीं पर जनक को तत्व उपदेश दिया था योगीश्वर याज्ञवल्क्य ने आदित्य वर्णन पुरुष का साक्षात्कार के बाद उसने शाखा का प्रचार किया भारतीय अध्यात्म विद्या की निधि शतपथ ब्राह्मण वेदों के रहस्य का प्रकाश कर रहा है उनकी स्मृति पर कल्याण नगर के धर्म शास्त्र को भी ज्ञानेश्वर की मिताक्षरा नामक टीका आज तक हिंदू विधान का नियंत्रण करती है इस भूमि में सत्यप्रकाश किया था नाम जिससे मैं उसे लेकर मैं क्या करूं?

यही पर लिच्छवियों का गणराज्य था, जिनसे विवाह-संबन्ध हो जाने के कारण प्रतापी गुप्त-महिपति अपने विरुद में लिच्छवि-दौहित्र लिखना गौरवास्पद समझते थे। यहीं गिरिव्रज नगरी थी, जिसके खण्डहर अभी तक वर्तमान हैं। यह महाभारत-काल में महाराज जरासन्ध की राजधानी थी, यहीं श्रीकृष्ण ने राजकुमार सहदेव का राज्याभिषेक किया था। उस समय के दुर्ग का पाषाण निर्मित दुर्घट प्राचीर अब भी देखने वालों को आश्चर्यचकित करता है। इसी गिरिव्रज के पास राजगृह है, जिसके समीप वैभार, विपुल, तपोवन, शैलगिरि और रत्नगिरि नामक पाँच गिरि-शिखर थे। नगर के दक्षिण-पूर्व में स्थित रत्नगिरि पर एक गुफा में मुमुक्ष गौतम ने कठोर तपश्चर्या की थी। इस सप्तपर्णी का प्रत्येक रज:कण अत्यन्त तप:पावित है।

राजगृह से थोड़ी दूर पर नालन्दा-विश्वविद्यालय के भवन अभी तक विराजमान हैं। दस सहस्त्र विद्यार्थियों को शिक्षा देने वाले इस केन्द्र में सुदूर वृहत्तर भारत तथा पूर्वी देशों से छात्रगण आते थे। श्रीनालन्द-महाविहारीय-आर्य-भिक्षुक-संघ का प्रशंसा-पत्र प्राप्त करना अपूर्व गौरव का चिन्ह समझा जाता था। इसी मगध देश में पाटलिपुत्र नगर आठ सौ वर्षों तक भारत के छात्र तेज का अनुपम गोप्ता रहा है। यहीं के सम्राटों से पृथ्वी राजन्वती कहलाती थी। पाटलिपुत्र की दुर्ग-रचना बड़ी विलक्षण थी। एक परिखा ने नगर को चारों ओर से मेखला के समान घेर रखा था। नगर की रक्षा के

लिए सुदृढ़ काष्ठ का बना हुआ एक बृहत्काय प्राचीर था, जिसमें आने-जाने के चौदह मार्ग थे। इसके गोपुरों पर यत्र-तत्र तोरण बने हुए थे। नगर के भीतर पाँच सौ सत्तर सुवर्ण:खचित अट्टालिकाएँ थीं। चंद्रगुप्त मौर्य के सुगांगेय नामक राज-प्रसाद में सोने की बेलों पर चाँदी की चिड़ियाँ लगी हुई थीं। ऐसी अतुल संपत्ति और वैभव के भार से सिल्यूकस का राजदूत एकदम स्तब्ध हो गया था। जिस चाणक्य के अमर्ष ने नन्दराज को श्रीविहीन कर दिया तथा जिसके प्रसाद ने चंद्रगुप्त को सिंहासन पर प्रतिष्ठित किया, उसी कुशल मन्त्री की राजनीति से शासित होने वाले विशाल मौर्य-साम्राज्य के सुप्रबन्ध की जितनी प्रशंसा की जाये थोड़ी है।

इसी पाटलिपुत्र में 'देवानां प्रिय' प्रियदर्शी महाराज अशोक ने राज्य किया। बौद्ध-संघ में दीक्षा लेकर जिन्होंने भगवान् के नीति-धर्म का सुवर्ण-भूमि ब्राह्मा से गन्धार तक तथा सिंहल से कश्मीर तक प्रचार किया, जिन्होंने स्वदेश और विदेशों में सब प्राणियों के हित-सुख के लिए अनेक पुण्य-कर्म किये तथा मिश्र देश और सीरिया तक जिनका राज्य-संबंध था, उन महाराज अशोक की अमर कीर्ति का बखान करने वाले स्तंभ और धर्म-लेख शाहबाजगढ़ी से जूनागढ़ तक तथा धौली-जौगढ़ से सिद्धापुर (मैसूर) तक फैले हुए हैं। जिन्होंने भिक्षुसंघ भेजकर मध्य-एशिया की बर्बर जातियों में तथागत के धर्म का प्रचार किया, जिनके पुत्र और पुत्री ने स्वयं तप में दीक्षित होकर धर्म पथ को आलोकित किया तथा एशिया भूखंड को एकता के स्वप्न को सबसे पहले जिन्होंने सत्यात्मक रूप दिया,उन महाराज अशोक को जन्म देने वाली भारत भूमि ही हम सब की जन्मभूमि है।

इसी पाटलिपुत्र में महाराज पुष्यमित्र, परमभट्टारक परमभागवत महाराज समुद्रगुप्त तथा महाराजाधिराज परमेश्वर आदित्यसेन ने अनेक बार अश्वमेध यज्ञ करके "पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकराट्", इस वैदिक आदर्श की स्थापना की। पाटलिपुत्र विद्या का भी अनुपम केंद्र था। यहीं वर्ष, उपवर्ष, पाणिनि, पिंगल, ब्याडि, वररुचि, पतंजलि आदि शास्त्र-रचयिता 'शलाका' आदि नाना परीक्षाओं में उत्तीर्ण होकर ख्याति को प्राप्त हुए। मीमांसा और वेदान्त-सूत्रों पर भाष्य रचने वाले भगवान् उपवर्ष पाणिनि के गुरु थे। इसी पुरी में जन्म पाकर आर्यभट्ट ने आर्यभटीय ज्योतिष-शास्त्र की रचना की और आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व सूर्य के चारों ओर पृथ्वी के परिभ्रमण का व्याख्यान किया इसी तिरहुत (तीरभुक्ति) में नव्य-न्याय का जन्म हुआ, जिसने कुतार्किक विरोधियों को काटने के लिए पैने खाँडे का काम दिया। इस शस्त्र के होते हुए आस्तिक-शास्त्रों को जल्प, वितण्डा, हेत्वाभास आदि प्रबल रिपुओं से एकदम निर्भरता प्राप्त हो गयी। बिहार में ही शोण नदी के तट पर स्थित प्रीतिकूट गाँव में महाकवि बाणभट्ट का जन्म हुआ, जिनकी कादंबरी नामक 'अतिद्वयी कथा' ने अकेले ही संस्कृत-गद्य की प्रतिष्ठा रख ली है। हर्ष के मित्र इस ऐतिहासिक गद्यकार ने 'हर्षचरित्र' के द्वारा मध्यकालीन भारत की दशा का बड़ा सजीव वर्णन किया है। इसी प्रदेश मैथिल-कोकिल विद्यापति ने काव्य-रचना की, जिसका सम्मान तीन-तीन प्रान्तों में समान रूप से हुआ है। इसी प्रान्त के दक्षिण में उत्कल और कलिंग हैं, जहाँ के समुद्र-तटों पर सुदूर पूर्वी द्वीपों के साथ बराबर व्यापार होता था। महार्घ पदार्थों का क्रय-विक्रय करने वाले भण्डागारिक सुदृढ़ पोतों पर सामान लाद करद्वीपान्तरों में जाते थे। कलिंग के प्रतापी महाराज महामेघवाहन खारवेल ने पाटलिपुत्र तक अपने राज्य का विस्तार किया था। उन्हीं की कृपा से कुमारी पर्वत पर जिन शास्त्रों का पारायण किया गया।

बिहार के पूर्व में बंग देश है। यहाँ के समतट प्रदेश सदा से गंगा के अनुपम कृपा-पात्र रहे हैं। गंगा और ब्रह्मपुत्र की क्रोड़ में स्थित यह भूखण्ड बहुत उपजाऊ है। बंगाल के 'आपाद-पद्म-प्रणत कलमों' का वर्णन कौन कर सकता है? यहाँ के पुण्ड्रवर्धन और सुवर्णकुड्या स्थानों में अनुपम कौशेय दुकुल तैयार होते थे। कर्णसुवर्ण के समीप नागकेसर,

लिकुच, बकुल तथा वट वृक्षों पर कोष-कीट पाले जाते थे। यहाँ के बुनने वालों का सम्बन्ध लाट (उत्तरी गुजरात) तथा दसपुर (वर्तमान मन्दसौर, मध्यभारत) के अंशुक-व्यवसायियों से था। कर्णसुवर्ण के समीप में ही रक्त-मृत्तिका स्थान है, जहाँ के पोताधिपति महानाविक बुद्धगुप्त का शिलालेख मलय प्राय:द्वीप के वैलेजली नामक स्थान में अभी तक विराजमान है।

यहाँ का साहित्य अपूर्व है। जहाँ कृष्णभक्त चैतन्य का जन्म हुआ हो, उस भूमि के पूण्य भाग का क्या कहना है! कविवर जयदेव की विपंची इसी वंशभूमि में निनादित हुई। उनके समकालीन धोयी कवि और रूपगोस्वामी ने भी अद्‌भुत काव्य-रचना की। यहीं नासिरशाह, हुसेनशाह आदि के समय में विद्यापति, कृत्तिवास, चण्डीदास और मालाधर वसु ने भगवद्‌भक्तिमयी काव्यवाणी का प्रसार किया। भक्त हरिदास की कीर्तन की पुण्य भूमि यही है। धर्मशास्त्र के धुरन्धर पंडित जीमूतवाहन ने इसी प्रान्त में दायभाग नामक ग्रंथ की रचना की। हे मातृभूमि, तेरा गौरव अपूर्व है, जिसमें ऐसे-ऐसे धर्मतत्त्व-कोविद उत्पन्न हुए। शक्ति तत्व की उपासना करने वाले इस प्रान्त ने भारत के अभ्युत्थान में अग्रणी बनकर भाग लिया है। 'वंदे मातरम्' गान प्रारम्भ में यहीं गाया गया। काव्य, कला, साहित्य, नाटक, विज्ञान, सब में ही बंगीय प्रतिभा का प्रकाश हुआ है। बंग के उत्तर-पूर्वी कोण पर नवद्वीप नगरी है, जो श्री चैतन्य महाप्रभु की जन्मभूमि है। प्राची के ललाट पर आभासित रोचना बिन्दु के सदृश नवद्वीप को दूसरी तक्षशिला ही कहना चाहिए। तिरहुत में निर्मित नव्य-न्यायरूपी खडग पर नवद्वीप में ही धार रखी गयी। काशी, कांची, तक्षशिला और नवद्वीप,इनको ज्ञान-गुरु भारत का अन्त:करण-चतुष्टय ही समझना चाहिए । प्रकृति के अनुपम कृपापात्र कामरूप में कामाक्षा देवी का प्रसिद्ध मंदिर है। इस प्राग्ज्योतिष् प्रान्त से भी मातृभूमि को बहुत कुछ आशाएँ हैं।

मध्यभारत में मालव प्रदेश है। यहीं अवन्ति और विदिशा नामक राजधानियाँ हैं। चर्मण्वती, शिप्रा, गम्भीरा, वेत्रवती, सिन्धु, तमसा आदि वारिधाराएँ इसी प्रदेश से यमुना के पास उपहार ले जाती हैं। उत्तरी मालव की उज्जयिनी नामक राजधानी थी, दक्षिण मालव की प्रधान पुरी महिण्मती थी। उज्जयिनी नगरी में देश के प्रधान व्यापार मार्ग मिलते थे। पहला मार्ग सौबीर से अवन्ती तक, दूसरा प्रतिष्ठान से अवन्त-विदिशा होता हुआ कौशाम्बी से साकेत और श्रावस्ती को जाता था। वहाँ से कुशीनगर, पावा, पाटलिपुत्र और राजगृह तक सम्बद्ध था। तीसरा मार्ग अवन्ती से काशी होता हुआ चम्पा और ताम्रलिप्ती तक जाता था। चौथा प्रसिद्ध मार्ग अवन्ती से गान्धार देश को मिलाता था। इस विशालापुरी में किसी समय प्रद्योतो का राज्य था। यहीं ज्योतिष-विद्या की अपूर्व उन्नति हुई। पंच-सिद्धान्तों के रचयिता आचार्य वाराहमिहिर यहीं रहते थे। सारे भारत में यह पुरी संस्कृत का केन्द्र थी। महाकवि कालिदास में जहाँ निवास किया हो, उसको स्वर्ग का ही कान्तिमत् खण्ड कहना चाहिए। यहीं शिप्रा के तीर पर स्थित महाकाल के मन्दिर में नित्य महाभारत की कथा होती थी। यह अवन्ती किसी समय हूण-नृपतियों की राजधानी थी। प्रबल प्रतापी छत्रप रुद्रदामन् विक्रम के द्वितीय शताब्दी में यहीं राज करते थे। मालव प्रदेश में ही पुष्यमित्रों का गणराज्य था, जिन्होंने गुप्त-कुल की राजलक्ष्मी को विचलित कर दिया था। इन्हीं समुदित-बल-कोष पुष्यमित्रों पर समर-विजयी होने के लिए महाराज स्कंद गुप्त ने भितरी गाँव के पास एक रात्रि पृथ्वी तल पर शयन करके तपस्या से व्यतीत की थी। विलुप्त-वंश लक्ष्मी के संस्तम्भन के लिए जब सेनानी लोग तपस्या करते हैं। तब क्षात्र धर्म समुदीर्ण हो जाता है। जिन्होंने समरांगण में विक्रान्त हूणों से लोहा लेकर अपने भुज-दण्डों से पृथिवी को कम्पायमान कर दिया तथा जिन्होंने अनन्त म्लेच्छों को समाप्त कर भारत-मही को पुन: आर्य धर्म में दीक्षित किया, यह अवन्तिपुरी उन्हीं हणहनन-केसरी जनेन्द्र कल्किराज महाराज यशोधर्मन् की पुण्य भूमि है। इसी अवन्ति के समीप दक्षिण में धारा नगरी है, जहाँ सरस्वती

के अवतार महाराज भोज ने राज्य किया। भोज की विद्या के अगाध गम्भीर्य को त्रिलोकी में कौन पूरी तरह जानता है? वह कौन-सा विषय है, जिस पर सरस्वती कण्ठाभरण महाराज भोज ने लेखनी न उठायी हो। हे मालव भूमि! तुझे बारम्बार प्रणाम है।

मध्यभारत के पूर्वी भाग में विदिशा नामक नगरी है। इसी प्रदेश को दशार्ण कहते थे। यहाँ साँची और भरहुत के स्तूप हैं, जिनकी शिल्प कला के कारण मातृभूमि का गौरव प्रकृष्ट हो रहा है। ये शिल्प के उदाहरण किसी सम्राट् की आज्ञा से नहीं बने हैं, वरन् सामान्य पौर-जानपद प्रजा ने अपनी-अपनी सामर्थ्य के अनुसार इनके निर्माण का भार वहन किया था। साँची के विशाल तोरण भारतीय शिल्पकला के अद्‌भुत उदाहरण हैं। उनमें तक्षक के अमर हृदय की छाप लगी हुई है। समीप ही भरहुत के स्तूपों में भदन्त, कश्यपगोत्र, मध्यम, दुन्दुभिसार और गोतीपुत्र आदि की अस्थियां बाइस सौ वर्ष बाद भी उसी तरह रखी हुई हैं। इन महात्माओं ने युद्ध-दुन्दुभि की जगह धर्म का भेरी-घोष करने वाले महाराज अशोक की आज्ञा से प्रेरित होकर हिमालय के प्रदेशों में भगवान् बुद्ध के धर्म का प्रचार किया था। इस भूखण्ड में हिन्दी भाषा खूब फली-फूली है। यहीं चम्पतराय के पुत्र छत्रसाल के अलौकिक पुरुषार्थ के साथ हिन्दू-राज्य की स्थापना की थी।

मध्यभारत के दक्षिण में मध्य-प्रदेश है। यही विन्ध्य और परियात्र पर्वतों के बीच मेकल-कुमारी रेवा बहती है। यहाँ के पर्वतों और वनखण्डों में अभी तक आदिम सभ्यता बसती है। महाकान्तार और दण्डकारण्य यहीं थे। यहीं शून्य जन-स्थान में राम, लक्ष्मण और सीता ने भ्रमण किया थाष। इसके दक्षिण में विदर्भ देश है, जहाँ दमयन्ती और इन्दुमती जैसे रमणी-रत्न हुए हैं। यहीं पद्‌मपुर नामक ग्राम में कश्यपगोत्रीय ब्राह्मवादी उदुम्बर ब्राह्मणों के घर में कविवर भवभूति हुए, शब्द-ब्रह्म को प्रत्यक्ष करने वाले इन प्राज्ञ महात्मा की परिणति वाणी ही 'उत्तर रामचरित' के रूप में प्रकट हुई। कुमारिल के वेदोत्थान-आंदोलन के समय जिस वैदिक सभ्यता का उद्धार हुआ, उसका समस्त आदर्श भवभूति में पुंजीभूत हो गया था। इसी विदर्भ में अचलपुर ग्राम में कौशिक गोत्र में महाकवि भारवि और दंडी ने जन्म लिया, जिनके अर्थ गौरव और पद लालित्य सहृदय जनों को मुग्ध कर लिया है। इस मध्य प्रांत में ही रामगिरि, माल-क्षेत्र और आम्रकूट हैं। यहाँ के छत्तीसगढ़ के इतिहास को राजस्थान का ही एक टुकड़ा समझना चाहिए। इसी के दक्षिणवर्ती वेनगंगा और गोदावरी तथा तुंगभद्रा और कृष्णा नदियों के बीच में महाकान्तार प्रदेश हैं, ये किसी समय वन्य जातियों से भरे हुए थे। यहाँ ही सातवाहन राज्य का विस्तार हुआ था। यहाँ अभी तक प्राचीन संस्कृति साहित्य के अनेक ग्रंथ सुरक्षित हैं। इसके उत्तर-पश्चिम कोने में अजन्ता की गुफाएँ हैं, जिनको राष्ट्रीय शिल्पशाला का गौरव पद प्राप्त है। मौर्य गुप्त चालुक्य, पल्लव, सब सम्राटों ने अजन्ता की गुफाओं के सँवारने में अपना ध्यान दिया था। इन्हीं गुफाओं के निर्माण में श्रीमान और वित्तपाल सदृश तक्षकों के कौशल का परिचय मिलता है।

पश्चिम में उत्तर से दक्षिण तक फैला हुआ महाराष्ट्र देश है। इसके उत्तर में सिंधु-सौवीर देश है, जहाँ के राजा जयद्रथ ने कुरुक्षेत्र के युद्ध में भाग लिया था। यह क्षेत्र सिंधु नदी का अनुपम कृपापात्र है। यहाँ किसी समय अम्बण्ठ और क्षत्रिय नाम के जनपद मुचुकर्णि गणराज्य था, जिन्होंने सिकंदर की गति को रोककर अंतरराष्ट्रीय विधान का पालन किया था। यहाँ के अधिवासी दण्डनीति में बड़े निष्णात थे। मुचुकर्णि संघ के राज्य में सोने-चाँदी की खानें थीं। ये लोग स्वास्थ्य के नियमों का धर्म की तरह पालन करते थे और सवा सौ- डेढ़ सौ वर्षो का दीर्घायुष्य प्राप्त करते हुए 'जीवेम शरद: शतं भूयश्च शरद: शतात्' का आदर्श रखते थे। स्वतंत्रता के उपासक इस जनपद में कोई कदर्य और दास नहीं था। यहीं पर सिंधु के पास पाटल नगर था, जहाँ से पाश्चात्य देशों के साथ विपुल व्यापार होता था। इस सौवीर प्रान्त

में राजा दाहिर ने देशाभिमान की वेदी पर अपनी बलि चढ़ा दी थी। विक्रम की सातवीं शताब्दी में सिन्धु तीर पर सुखासीन ऋषि सप्तम देवल ने अपनी स्मृति की रचना की, जिसमें समाज और जाति की रक्षा के लिए पुनरावर्तन संस्कार का प्रतिपादन किया गया है। इसी प्रान्त के अमरकोट दुर्ग में सम्राट अकबर का जन्म हुआ था। सिन्धु देश की शुष्क भूमि में वेदान्त और सूफी-धर्म अत्यन्त पल्लवित हुआ है। सत्रहवीं शताब्दी में शाह लतीफ नाम के महात्मा ने 'रसालो' लिखकर 'अहम् ब्रह्म' के उपदेश द्वारा मानव-हृदय स्थित एकता को खोज निकाला था। सचल, स्वामी और दलपत ने उसी ज्ञान को घर-घर में पहुँचा दिया। यह सिन्ध प्रान्त यद्यपि देश के एक कोने में है, तथापि मातृभूमि के हृदय के साथ इनका हृदय एक है। इसके निकट ही आनर्त, सुराष्ट्र और लाट प्रदेश हैं। इनमें सरस्वती, साभ्रमती (साबरमती), मही, नर्मदा और पयोष्णी नदियाँ बहती हैं। सरस्वती नदी पर अणाहिलपत्तन नगर है, जहाँ कलिकाल के आचार्य, कुमार पाल के सचिव पाहिणी पुत्र श्री हेमचन्द्र ने अनेक ग्रन्थों का निर्माण किया। इन्होंने जैन और ब्राह्मण-धर्म के अनुयायियों को समान-रूप से अनुगृहीत किया। इस पतन में जैन हस्तलिखित ग्रंथों के भंडार अभी तक सुरक्षित हैं। श्री हेमचंद्राचार्य का समस्त पुस्तकालय खरतरगच्छ की दीवारों में बन्द है। यहाँ के साहित्य की ओर सब लोग आशा-भरी दृष्टि से देख रहे हैं।

सौराष्ट्र में वलभी राजधानी है, जहाँ गुप्त-नरेशों की एक शाखा ने कई शताब्दियों तक राज्य किया। इसी के समीप पालिताना और शत्रुंजय तीर्थ हैं, जहाँ सहस्रों अर्हत प्रतिवर्ष यात्रा करते हैं। इसी के गौरव का धनेश्वर ने शत्रुंजय माहात्म्य नामक ग्रंथ में गुणगान किया है। सुराष्ट्र मण्डल की सर्व प्रसिद्ध पुरी द्वारावती है, जो अन्धक-वृष्णि गणराज्य की राजधानी थी। यहीं विक्रम के चौदह वर्ष पूर्व अर्थभोक्ता राजन्य श्रीकृष्ण सात्वत,दाशार्ह, वृष्णि आदि यादवों के प्रधान बनकर शासनसूत्र चलाते थे। इन्हीं वृष्णियों के 'वृष्णिसंघस्य त्रातरस्य' शब्दों से अंकित प्राचीन सिक्के अब भी मिलते हैं, जिन पर चक्र की मुद्रा बनी हुई है। द्वारावती और इंद्रप्रस्थ के तत्कालीन राजनीतिक सम्बन्ध को कौन भारतवासी नहीं जानता ? यहीं समुद्र तीर पर प्रभास-तीर्थ है, जहाँ मदोद्धत यादवों का विनाश हुआ था। यही प्रभास पीछे से सोमनाथ नाम से विख्यात हुआ। यहीं पर आर्य जाति को 'दंडनीति का नाश होने पर सब धर्म भी डूब जाते हैं' (मज्जेत् त्रयी दण्डनीतौ हतायां सर्वे धर्माः प्रक्षयेयुविर्वृद्धाः) इस अत्यन्त कड़वे सत्य का यवन विध्वंसक के हाथ से प्रत्यक्ष अनुभव करना पड़ा। यह गुजरात प्रांत वही है, जो व्यापार में अत्यंत उन्नतिशील था, जहाँ के नाविक अपनी-अपनी तरी और पोतों में अत्यन्त महार्घ पदार्थ लादकर द्वीप-द्वीपान्तर में बेच कर उत्तम लाभ और पृथु धन लाते थे, जहाँ से एक सहस्त्र रथकार किसी समय विराट भारत को बसाने के लिए गए थे। इसी गुर्जर प्रांत में मोरवी और पोरबंदर हैं, जहाँ तेजस्वी दयानन्द से आदित्य-ब्रह्मचारी और गांधी-से सत्याग्रही हुए हैं। इस पुण्यभूमि ने नरसी मेहता और अक्खा को जन्म दिया है। यही गिरिनार पर्वत के पास सुदर्शन झील है, जिसे मौर्य सम्राट चंद्रगुप्त ने अपने हाकिम पुष्यगुप्त द्वारा बनवाया था। उनका पौत्र अशोक ने तुषाष्फ नामक प्रादेशिक को आज्ञा देकर यहँ नहरें बनवाई थी। इस सुदर्शन ने सुराष्ट्र की भूमि को अदेवमातृक बना दिया था। चार शताब्दी बाद प्रचण्ड वर्षा के कारण इस झील का बाँध टूट गया था। तब उज्जैन के प्रतापी छत्रप् रुद्रदामन ने इसके निर्माण के लिए अपने मंत्रिमण्डल से रुपया माँगा था, परन्तु मन्त्रियों के अस्वीकार करने पर रुद्रदामन ने अपने निजी कोष से इसका निर्माण कराया था। गिरनार का शिलालेख सूचित करता है कि भारत में राजा के अधिकारों पर मंत्रिमंडल का कितना अंकुश था।

इसके दक्षिण में महाराष्ट्र देश है, जहाँ सह्याद्रि पर्वत-श्रेणियाँ हैं। विदर्भ के पश्चिम का भाग कुन्तल कहलाता था। यहीं प्राकृत-कवि राजशेखर का जन्म हुआ था, जिसने कुंतल-कुमारी कर्पूरमंजरी के चरित्र का वर्णन किया है। महाराष्ट्र

के मध्य भाग में भीमा नदी के दक्षिणी तट पर पंढरपुर स्थित है। यहीं ज्ञानेश्वर महाराज ने जन्म लेकर ज्ञानेश्वरी की रचना की। यहीं मुक्ताबाई के गर्भ से भक्त चोखामेला ने जन्म लिया। महाराष्ट्र के सन्तों का परिगणन कहाँ तक किया जाये? एकनाथ, नामदेव आदि महात्मा इसी प्रान्त में उत्पन्न हुए। कविवर मोरोपन्त और साधु तुकाराम ने अपने काव्यामृत से महाराष्ट्र वासियों को तृप्त कर दिया। समर्थ गुरु रामदास ने छत्रपति शिवाजी जैसा शिष्य पाकर राष्ट्रीय धर्म की योजना की, सारे मराठों को संगठित करके महाराष्ट्र-धर्म को बढ़ाने का उपदेश दिया। हिन्दू-राज्य प्रणाली के उद्धारकर्ता छत्रपति शिवाजी को, जिन्होंने स्वधर्म और स्वराज्य की स्थापना करके भारतीय सभ्यता को बचाया, कौन नहीं जानता? इनकी कीर्ति को गाकर मतिमान भूषण अमर हो गए हैं।

दक्षिण का द्रविड़ देश भक्ति और ज्ञान का आगार है। इस दक्षिण-पथ के कई भाग हैं। गोदावरी और कृष्णा नदी के बीच आन्ध्र-देश है, जहाँ श्री शैल द्राक्षाराम और कालेश्वर के शिवलिंग हैं। इसी से यह प्रान्त तिलंगाना भी कहलाता है। यहीं आंजनेय हनुमान ने जन्म लिया था। यहीं सातवाहन नृपतियों की राजधानी थी, जिन्होंने चार शताब्दी तक वैदिक धर्म की दृढ़-ध्वजा का आरोपण किया। यहाँ का पौरजानपद-प्रबन्ध प्रशंसनीय था। यहाँ की नैगम,पूग और कुलिक सभाएँ जनता को पूर्ण स्वराज्य का अनुभव कराती थीं। आन्ध्र प्रदेश का मनुष्य-वर्गीकरण भी स्तुत्य था। महारथी, महासेनापति अमात्य, महामात्र, भाण्डागारिक, नैगम, सार्थवाह, श्रेष्ठिन्, लेखक, वैद्य, गंधिक, हालकीय, वर्धकि, लोह-वनिज और मालाकार आदि उद्योगों के अनुसार समाज का संगठन हुआ था। आन्ध्रों का समुद्र-वाहिक व्यापार उन्नति की चरम सीमा पर था। यहाँ काव्य और साहित्य का भी विपुल विकास हुआ है। नन्नय भट्ट, तिक्कन सोमयाजी और एरी प्रेग्गडा नाम की कवित्रय ने तीन शताब्दियों के अन्दर आंध्र-महाभारत की रचना की। भक्त-शिरोमणि पोतनामात्य और वेद-पुराणों के अद्वितीय विद्वान महाप्रतिभाशाली श्रीनाथ कवि ने आंध्र देश को गौरवान्वित किया है। त्यागराज आंध्र के विद्यापति किंवा जयदेव हैं। ऐसे-ऐसे कवियों से विभूषित गोदावरी और कृष्णा के बीच के अधिवासी सरलता और अध्यवसाय की मूर्ति हैं।

कर्नाट या तमिल प्रान्त पूर्वी समुद्र-तट पर दूर फैला हुआ है। यही कावेरी और ताम्रपर्णी नदियाँ हैं। यहीं मुक्ताफल, जवादु, रिसेय आदि महार्घ पदार्थों का व्यापार होता था। यहाँ के नाना देशी संघों में देश-विदेशों के व्यवसायीगण सम्मिलित होते थे। स्थानीय स्वशासन की प्रवृत्ति यहाँ चरम सीमा को पहुँच गई थी। यहाँ ही तृतीय संगम के समय में तिरुवल्लवर महाकवि ने 'तिरुक्कुरल' ग्रन्थ की रचना की। इस ग्रन्थ में कोटि-संख्यक मनुष्यों को शान्ति और नीति की शिक्षा दी है। तिरुवल्लुवर सदृश कवि ही राष्ट्र की सभ्यता और संस्कृति का वर्धन करते हैं। धन्य है तिरुवल्लुर की सरस्वती, जिसने तुलसीदास की शारदा की सदृश ही दक्षिण भारत में धर्म की स्थापना की। अनन्त रत्न अपनी-अपनी प्रभावों के व्यतिकर से मातृभूमि के स्वरूप को भासित कर रहे हैं। शैव-धर्मानुरागी मैकण्ड ने जिनकी उपाधि श्वेताचार्य श्वेतवन भी है, शिवज्ञानबोध नामक ग्रंथ की रचना की, जो तमिलों की सबसे प्रिय धर्म-पुस्तक है। श्वेताचार्य के ही शिष्ट अरुलनन्दि उत्कृष्ट दार्शनिक हुए तथा दूसरे शिष्य श्रीकण्ठ ने ब्रह्मसूत्रों पर ब्रह्ममीमांसा नामक भाष्य रचा। बोधायन, शंकर, भास्कर और रामानुज के बाद श्रीकण्ठ का ही भाष्य है। कम्बर की वाल्मीकि-रामायण भी तमिल साहित्य का हृदयहार है। यहाँ चोलों और पाण्ड्यों के विस्तृत साम्राज्य थे। चोल महापतियों ने तंजोर महानगरी को अतुल सम्पत्ति व्यय करके सजाया था। यहाँ के विशाल मंदिर अभी तक दर्शकों को चकित करते हैं। पल्लवों की राजधानी काँची थी। जिसकी गणना भारत के महापुरियों में की जाती है। यहीं के सिंहविष्णु पल्लव के आश्रित भारवि कवि थे। सम्राट नृसिंहवर्मन ने अपने प्रखर प्रताप से महाराज पुलकेशी की प्रतिभा को तिरोहित कर दिया था। कांचीपुरी

के आपणों में ऊँचे-ऊँचे विमान-गृह, सौध और अट्टों में तथा राजमार्ग के तोरणों प्राकारों में अनन्त लक्ष्मी बरसती थी। इसे दक्षिण का पाटलिपुत्र ही कहना चाहिए।

पश्चिमी सागर की तीर-प्रान्त केरल और महिसूर (मैसूर) हिरणवक्षा मातृभूमि के परम प्रिय अंग हैं। मध्व-धर्म के केंद्र इन प्रान्तों में पम्पा, रत्ना, लक्ष्मीश तथा अड़सिंगाचार्य जैसे भक्त और कवि सम्राट हुए हैं। जिनकी रचनाओं से कन्नड़ भाषा अलंकृत है। यही धाड़वाड़ के समीप गजेंद्रगढ़ में कोलाचल-सूरि मल्लिनाथ के वंशज अभी तक रहते हैं। कणाद, व्यास, पतंजलि और गौतमशास्त्रों में पारंगत तथा अतुल विषयों के ज्ञाता मल्लिनाथ के सदृश दूसरा टीकाकार किसी भाषा में नहीं हुआ। उनको संजीवनी और घण्टापथ टीकाएँ अनन्य-सामान्य हैं। परम पावन कनकदास ने यही पंचमकुल में जन्म लेकर हरितोषणी भक्तितरंगिणी से समस्त जनों को स्नान कराया। यह किष्किन्धा प्रदेश है, जहाँ पम्पा और ऋष्यमूक पर्वत हैं। केरल में सरस्वती, वेत्रवती और मुरला नाम की नदियाँ हैं। यहाँ केतकी की धूलि निरन्तर वायु में उड़ती रहती है। यहीं मलय-स्थल में बहता हुआ दक्षिणानल माता के विपुल व्यापी अंचल को सुरभित करता है। ताम्बूल-वल्ली, एलालता, पूग और तमालपत्रों से आस्तीर्ण इन भू-प्रदेशों का स्मरण करके न जाने कितनी बार भारतीय कविजन विह्वल हो गये। यहीं केरल-भूमि भगवान शंकर की जन्म-भूमि है। केवल पन्द्रह वर्ष की आयु में ही जिन्होंने शारीरिक सूत्रों पर भाष्य की रचना की,उन ब्रह्मज्ञानी शंकर ने विश्व-भर में भारत के यश को फैलाया है। कुमारिल, शंकर, यामुन, वेदांतदेशिक, रामानुज, वल्लभ, उम्बेक, माधव, मध्व, सायण आदि आचार्यों का जन्म दक्षिणापथ में ही हुआ था। इनकी प्रतिभा आज तक दर्शन और वेद के विषय में अप्रतिद्वन्द्विनी मानी जाती है। इन्होंने वैदिक सभ्यता का आदर्श उत्कृष्टतम रूप में लोक के सामने रखा था। ज्ञान और भक्तिं की जो तरंगे दक्षिणापथ से उठीं, सारे देश पर उनकी अमिट छाप लगी हुई है। दक्षिणापथ में ही ध्रुवस्वामिन्, देवस्वामिन्, भवस्वामिन्, अग्निस्वामिन् आदि ने धर्मसूत्रों पर भाष्य रचकर सामाजिक आचार की प्रतिष्ठा की। यहीं चालुक्य विक्रमांक की राजधानी कल्याण नगरी में श्री विज्ञानेश्वर ने 'मिताक्षरा' की रचना की, जो व्यावहारिक धर्मशास्त्र का देशभर में सर्व शिरोमणि ग्रंथ है।

असामान्य विद्वज्जनों को उत्पन्न करने वाली कला, साहित्य और विज्ञान में उन्नति की चरम सीमा को पहुँची हुई, पौर-जानपदों को उत्कृष्ट कक्षा की स्वतन्त्रता प्रदान करने वाली भारत भूमि के विषय में देवता भी गीत गाते हैं। अहा! वे कैसे धन्य भाग हैं, जिनकी ऐसी जननी है। हे भुवन-मन-मोहिनी, हे शुभ्र-तुषारकिरीटिनी, निर्मलसूर्यकरोज्जवलधरणी! तुम जनक-जननि-जननी हो। तुम्हारा-हमारा सम्बन्ध कुछ नया नहीं है, हमारे माता-पिता और उनके पूर्वजों की भी तुम धात्री हो। हे देवि! नील-सिन्धु नित्य तुम्हारे चरणतल को धोते हैं, जलदकाल में तुम्हारे मेघमेदुरित अम्बर को समुद्रानिल विकम्पित करता है। तुम्हारे गगन में सर्वप्रथम ज्ञान-सूर्य का उदय हुआ, तुम्हारे यहाँ सामवेद की उत्पत्ति तपोवनों में हुई है, ज्ञान और धर्ममयी काव्य-गाथाएँ आरम्भ में तुम्हारे वन-भवनों में प्रचारित हुई। चिरकल्याणमयी देवी, तुम धन्य हो! तुम देश-विदेश में सकल-सामग्री का वितरण करती हो। हे अमृत-निष्यन्दिनी मातृभूमि! अब हम तुम्हारे वैदिक गीत को गाते हैं।

'सत्य, यज्ञ, दीक्षा, तप और ब्रह्म तुम्हें धारण करते हैं। तुम हमारे भूत की साक्षी और भविष्य की अधिष्ठात्री हो। तुम विषमता से रहित होकर नाना प्रकार की वीर्यवती औषधियों का भरण करती हो। तुम्हारे ऊपर अग्नि और सोम नित्य प्रीतिपूर्वक सृष्टि कार्य करते हैं। तुम्हारे गिरि-पर्वत और अरण्य हमें सुख देते हैं। तुम्हारी वारिधाराएँ प्रमाद-रहित होकर रात-दिन बहती रहती हैं। तुम व्रीहि और यवादि अन्नों को उत्पन्न करती हो। तुम्हारी षट्-ऋतुएँ-ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर और वसन्त हमें सदा सुखावह होती हैं। तुम चतुष्पाद् और द्विपाद्, उभय प्राणियों का मात्र भावना

से पोषण करती हो। हे विश्वम्भरे देवि, तुम हिरण्यवक्षा हो। मणि, हिरण्य और निधियाँ तुम्हारे निगूढ़ स्थानों में सुगुप्त हैं। तुम्हारी गोद में जन्म लेकर हमारे पूर्वजनों ने अनेक पराक्रम किए। तुमसे जन्म लेकर सब तुम्हारे ही विराट स्वरूप में विलीन हो जाते हैं। तुम्हारे ऊपर नृत्य, गान आदि नाना प्रमोद होते हैं। तुम्हारे महायुद्धों में दुन्दुभि घोष होता है। तुम हमारे धर्म की आश्रयदात्री हो। तुम्हारे ऊपर ही यथाप्रान्त विभिन्न भाषा-भाषी ('नाना विवाचस:') और नाना धर्मों के मानने वाले मनुष्य निर्विघ्न असम्बाध रूप से रहते हैं। सब में तुम्हारी ही गंध बसी हुई है। तुम ही युवा का तेज और युवती का वर्चस् हो। तुम्हारे पथ अनेक हैं जिनमें भद्र और पापी दोनों प्रकार के पुरुष समान रूप से चलते हैं। तुम्हारी अनेक सभा और समितियाँ हैं, जिनमें हमारे सभेय युवा सुचारु रुप से बोलते हैं।"

मातृभूमि का हृदय परब्रह्म में स्थित है। देवयुग में यह भूमि सलिलार्णव के नीचे छिपी हुई थी। विचार करने वाले मनीषियों के लिए ही यह मातृभूमि प्रकट हुई। सुपुत्रों के लिए यह अमृत से परिपूर्ण है तथा दूसरों के लिए केवल जड़-मर्त्य हैं। जिस मातृभूमि में भद्र की कामना करने वाले ऋषियों ने तप किया है, जहाँ गायत्री मंत्र का गान हुआ है, वह भूमि हमें उत्तम राष्ट्र में बल और ब्रह्म तेज को देने वाली हो ।उसी के लिए हमारी सम्मिलित प्रार्थना है-

"आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्
आ राष्ट्रे राजन्य: शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायताम्
दोग्धी धेनुर्वोढाऽनड्वानाशु: सप्ति: पुरन्धिर्योषा
जिष्णू रथेष्ठा: सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायताम्
निकामे-निकामे न: पर्जन्यो वर्षतु
फलवत्यो न ओषधय: पच्यन्ताम्
योगक्षेमो न: कल्पताम्।।" *(यजु0 अ0 22/22)*